विपश्यना

[साधकों का मासिक प्रेरणापत्र]

रजि. नं. १९१५६/७१
पोस्टल रजि. नं. NS (M)–16/86

वर्ष १५ • बम्बई • बुद्धवर्ष २५३० • ज्येष्ठ पूर्णिमा [शक] • दि. २१–६–१९८६ • अंक १३

सही दर्शन : सही वन्दना

(२)

कोई भक्त अपने आराध्य देव अथवा देवी की वन्दना कैसे करे ? धर्म की सच्चाई गहराई से समझ में आ जाय तो उसके गुणों को याद करे, उनसे प्रेरणा प्राप्त करे और उन्हें अपने भीतर जगाने और अपने जीवन में उतारने का प्रयत्न करे. यही सही भक्ति होगी, यही सही वन्दना होगी.

इसी प्रकार जब कोई व्यक्ति बुद्ध की वन्दना करे तो महत्व बुद्ध के गुणों को ही दे. उन गुणों के प्रति श्रद्धान्वित होकर मन में प्रेरणा जगाए और उन्हें अपने जीवन में उतारने के लिए प्रयत्नशील हो जाय तो किसी संप्रदाय में नहीं बंधेगा, गुणों से बंधेगा. गुण सार्वजनीन होते हैं. शुद्ध धर्म से बंधेगा. शुद्ध धर्म सार्वजनीन होता है. इस प्रकार यथाशक्ति शुद्ध धर्म धारण करके अपना मंगल साध लेगा.

जब बुद्ध की वन्दना करे और धर्मपूर्वक करे तो यही कहे ..

"नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स"

याने नमस्कार है उनको जो भगवान हैं, अर्हत हैं, सम्यक् सम्बुद्ध हैं.

तो नमस्कार गुणों को हुआ. सम्मान गुणों का हुआ. ऐसे गुण धारण करनेवाला व्यक्ति कोई हो -- गौतम हो, काश्यप हो, या अन्य कोई हो.

इसीलिए शुद्ध धर्म के क्षेत्र में सही वंदना करते हुए यही कहा जाता है.

"ये च बुद्धा अतीता च ये च बुद्धा अनागता,
पच्चुपन्ना च ये बुद्धा अहं वन्दामि सब्बदा।"

मैं सर्वदा उन बुद्धों की वन्दना करता हूँ जो कि भूतकाल में हुए,उन बुद्धों की वंदना करता हूँ जो कि भविष्यकाल में होंगे और उन बुद्धों की वन्दना करता हूँ जो कि वर्तमान काल में हैं.

इस प्रकार की गई वन्दना किसी एक व्यक्ति की नहीं, बल्कि तीनों कालों के बोधिप्राप्त सभी व्यक्तियों की है. तो वंदना गुणों की हुई इसलिए सही वन्दना हुई

धम्म वाणी

भग्ग रागो भग्ग दोसो भग्ग मोहो अनासवो।
भग्गास्स पापका धम्मा भगवा तेन वुच्चती॥

राग, द्वेष और मोह को भग्न कर दिया है जिन्होंने, जो आश्रवरहित है, जिनके सभी पाप स्वभाव भग्न हो गए हैं, इसीलिए उनको भगवान कहते हैं।

जो भी व्यक्ति सम्यक् सम्बोधि प्राप्त कर लेता है वह अनंत गुणों से भर उठता है. उस व्यक्ति में कुछ ऐसे सद्गुण भी होते हैं जो कि प्रमुख होते हैं, प्रधान होते हैं और वह ये है :–

वह **भगवान** हो जाता है. याने वह अपने भीतर का समस्त राग, द्वेष और मोह भग्न कर लेता है और इस प्रकार भाग्यवान हो इसी जीवन में विमुक्ति के वैभव का ऐश्वर्यमय जीवन जीता है.

वह **अर्हत** हो जाता है. अपने सभी अरियों का याने शत्रुओं का हनन कर लेता है. कौन हैं शत्रु ? कोई बाहरी व्यक्ति हमारा शत्रु नहीं हुआ करता. हमारे अपने आंतरिक मनोविकार, क्लेश, कषाय ही सही माने में हमारे शत्रु हैं और इन्हीं शत्रुओं का हनन करके, खात्मा करके ही कोई व्यक्ति अरहन्त होता है, बुद्ध होता है. वह लोक-चक्र के आरे को धर्म-चक्र से काट देता है, इस माने में भी अर्हंत हो जाता है.

ऐसा व्यक्ति **सम्यक् सम्बुद्ध** हो जाता हैं. सम्यक् याने भली प्रकार से, सही प्रकार से सम्बुद्ध हो जाता है. सम्बुद्ध याने स्वयं बोधि प्राप्त कर लेता है. केवल सुनी-सुनाई, पढ़ी-पढ़ाई बात से कोई व्यक्ति सम्बुद्ध नहीं हो सकता. सत्य के बारे में केवल सुन लेने या पढ़ लेने से अथवा उसे श्रद्धा से या बुद्धि से मात्र स्वीकार कर लेने से कोई व्यक्ति सम्बुद्ध नहीं हो सकता. जब तक सत्य को स्वयं प्रत्यक्ष अनुभूति द्वारा न जान ले, तब तक सम्बुद्ध नहीं होगा. केवल शील के बल पर नहीं, केवल चित्त को अडोल, अविचल कर देने वाली समाधि के बल पर ही नहीं, बल्कि स्वयं अपनी प्रज्ञा द्वारा सत्य को जान लेता है, वही सम्बुद्ध होता है. प्रज्ञा भी मात्र श्रुतमयी नहीं, मात्र चिंतनमयी नहीं बल्कि भावनामयी प्रज्ञा द्वारा स्वानुभूति के आधार पर नाम और रूप के याने चित्त

और शरीर के अनित्यधर्मा स्वभाव का साक्षात्कार करके और फिर इस अनित्य क्षेत्र को भी बींधते हुए नित्यधर्मा परम सत्य निर्वाण का स्वयं साक्षात्कार कर लेता है तो ही सम्यक् सम्बुद्ध होता है.

इंद्रिय क्षेत्र की सभी सुखद-दुखद अनुभूतियाँ अनित्यधर्मा हैं. अनात्मधर्मा हैं और इसी कारण वस्तुतः दुख-धर्मा है. इस दुःख-आर्यसत्य का स्वयं साक्षात्कार करता हैं जो अनित्यधर्मा है, अनात्मधर्मा है उसके प्रति राग-द्वेषमयी तृष्णा जगाने के कारण ही दुःख की उत्पत्ति होती है. इस समुदय सत्य को भी स्वानुभूति द्वारा जान लेता है. जिसकी उत्पत्ति कारण से हो उसका निवारण किया जा सकता है. कारण के निवारण से उसका निवारण साध्य है -- यह समझकर दुख के कारण तृष्णा का पूर्णतया निवारण करके दुःख-विमुक्ति के सत्य की स्वयं अनुभूति करके साक्षात्कार कर लेता है. इस तृष्णा निवारण का कोई तरीका होना चाहिए, कोई विधि होनी चाहिए. उस विधि को भी स्वयं भावित करके अनुभूतियों के स्तर पर जान लेता है और दुखः छुटकारा पा लेता है. ऐसा स्वयं कर लेता है. तो ही स्वयं बुद्ध होता है याने सम्बुद्ध होता है. सम्यक् रूप से यह अवस्था प्राप्त कर लेता है. इसीलिए सम्यक् सम्बुद्ध कहलाता है.

कोई व्यक्ति बुद्ध होता है तो **विज्जाचरण सम्पन्नो** हो जाता है. याने विद्या और आचरण दोनों में संपन्न हो जाता है. क्या है विद्या ? क्या है आचरण ? विद्या वह जो अविद्या को दूर करे. अविद्या वह जो सच्चाई पर आवरण डाले. उसके प्रति भ्रम पैदा करे. जो वस्तुतः अनित्य है उसके प्रति नित्य होने का भ्रम. जो वस्तुतः अनात्म है -- मैं नहीं, मेरा नहीं, मेरी आत्मा नहीं; उसके प्रति मैं, मेरा, मेरी आत्मा होने का भ्रम, जो वस्तुतः दुःख है उसके प्रति सुख होने का भ्रम पैदा करे. यह भ्रम दूर हो तथा अनित्य, दुःख और अनात्म के स्वभाव को वास्तविकता के स्तर पर समझ ले तो अविद्या दूर हुई, विद्या स्थापित हुई, इसी प्रकार जो दुःख है, जो दुःख का मूल कारण है, जो दुःख का निवारण है और जो दुःख के निवारण का उपाय है उसे भली भांति जान ले तो अविद्या दूर हुई, विद्या स्थापित हुई.

लेकिन केवल विद्या में संपन्न होना पर्याप्त नहीं है. इसके आचरण में भी संपन्न हो तो ही बुद्ध होता है. क्या है आचरण ? इन सच्चाईयों को केवल बुद्धि के स्तर पर ही समझकर न रह जाय बल्कि वास्तविक प्रत्यक्ष अनुभूति के स्तर पर जान ले तो ही आचरण में संपन्न हुआ. धर्म का केवल सैद्धांतिक पक्ष ही नहीं जाने, बल्कि उसके व्यावहारिक पक्ष को भी जीवन में उतारे तो ही आचरण में संपन्न हुआ.

जो व्यक्ति बुद्ध होता है वह **सुगतो** होता है. याने सुगत होता है. याने उसने अच्छे मार्ग पर गमन किया है. कायिक कर्म और वाचिक कर्म को सुधारते हुए मनोकर्म को भी इस कदर सुधार लिया है कि अब कोई ऐसा कर्म कर ही नहीं सकता जो किसी की किंचित मात्र भी हानि कर दे. लोक-कल्याण ही लोक-कल्याण करता है. ऐसा व्यक्ति मानस के ऊपरी ऊपरी विकारों का ही प्रहाण करके नहीं रह गया बल्कि अन्तरमन की गहराइयों तक अनेक जन्मों के संचित अनुशय-क्लेशों को भी जड़ से उखाड़ चुका और पूर्णतया विकार-विमुक्त हो गया है. स्थूल सत्यों का साक्षात्कार करते करते स्थूल से सूक्ष्म, सूक्ष्म से सूक्ष्मतर, सूक्ष्मतर से सूक्ष्मतम परमपद निर्वाण तक का साक्षात्कार कर चुका है. शील, समाधि और प्रज्ञा के आर्य-आष्टांगिक मार्ग पर भली प्रकार गमन किया है और निर्वाण की याने मुक्ति की अवस्था तक पहुँच गया है. विपश्यना साधना करते हुए श्रोतापत्ति, सगदागामी, अनागामी, के मार्ग पर सुगमता से चला हुआ अर्हंत, मार्ग-फल की अवस्था तक जा पहुँचा है तो ही सही माने में बुद्ध हुआ है, सुगत हुआ है.

जो बुद्ध होता है वह **लोकविदू** होता है. याने जो लोकों को जाननेवाला होता है. ऋद्धिबल से वह समस्त लोकोंकी यात्रा कर सकता है. उन्हें जब चाहे तब अपने दिव्य चक्षुओंसे देख सकता है. सर्वज्ञ हो जाने के कारण उनके बारे में पूरी जानकारी प्राप्त कर सकता है. लेकिन केवल इन्हीं अर्थों में लोकविदू नहीं है. इस साढ़े तीन हाथ की काया में सारे लोकों का अनुभव कर लेता है. नीचे लोकों से लेकर मनुष्य लोक, देवलोक, रूप ब्रह्मलोक और अरूप ब्रह्मलोक की अनुभूति इसी काय-पिंड में की जाती है. ठीक ही कहा गया है कि लोकों की उत्पत्ति, उनकी उत्पत्ति का कारण, उनका निरोध और उनके निरोध का उपाय इस साढ़े तीन हाथ की काया के भीतर ही है. लोक का अंत किये बिना कोई व्यक्ति मुक्त नहीं बन सकता. बुद्ध होता है तो समस्त लोगों को अपने भीतर जानकर उनका निरोध कर, उनके परे लोकोत्तर निर्वाण अवस्था का अपने भीतर ही साक्षात्कार कर लेता है. तभी लोकविदू कहलाता है

बुद्ध होता है तो **अनुत्तरो** होता है याने अनुत्तर होता है. जिस अवस्था पर यह व्यक्ति पहुँच गया हैं इससे ऊँची अन्य कोई अवस्था नहीं, इस माने में अनुत्तर है.

बुद्ध होता है तो **पुरिसदम्मसारथी** कहलाता है, याने जिस प्रकार एक अनुभवी सारथी बिगड़ैल घोड़ों को सुशिक्षित बना देता है, ऐसे ही गलत रास्ते पड़े हुए लोगों को सही रास्ते पर लगाने में वह कुशल होता है.

बुद्ध होता है तो **सत्थादेव मनुस्सानं** कहलाता है.

बुद्धत्व प्राप्त करने पर उसके मन में असीम, अपरिमित करुणा भर उठती है. अरे संसार में कितने दुखियारे हैं ? यह सच है कि अधिकांश लोग विभिन्न दार्शनिक मान्यताओं के जंजाल में उलझे हैं, सांप्रदायिक जकड़न में जकड़े हैं, कर्मकांडों के कारागार में कैद हैं. शुद्ध धर्म जो कुदरत का सार्वजनीन कानून है उसे समझ भी नहीं पायेंगे. समझने की कोशिश भी नहीं करेंगे. परन्तु इनमें से अनेक लोग ऐसे अवश्य हैं जिनकी आंखों पर अज्ञान का बड़ा झीना सा ही पर्दा पडा है. उनका तो कल्याण हो ! ऐसे बहुतों का हित हो ! बहुतों का सुख सधे ! कोई भी व्यक्ति जो बुद्ध हुआ, वह इन मंगलभावों से भरकर बिना किसी भेदभाव

के अपनी ही ओर से सब को शुद्ध धर्म बांटता है. लोगों को शुद्ध धर्म बांटता है. लोगो को शुद्ध धर्म म अनुशाषित करता है. अतः उनका शास्ता कहलाता है. शास्ता गरीबों का भी, अमीरों का भी. शास्ता विद्वानों का भी, अनपढ़ों का भी. शास्ता धनपतियों का भी, धनहीनों का भी. शास्ता पुरुषों का भी, नारियों का भी, शास्ता राजाओं का भी, प्रजाओं का भी, शास्ता देवों का भी और मनुष्यों का भी. महाकारुणिक शास्ता!

जब जब बुद्ध की वंदना करें तो समझें कि सही वदना तभी होगी जब कि बुद्ध के उपरोक्त गुणों को याद करें. अच्छा हो इन पावन पुरातन शब्दों में याद करें –

"इतिपि सो भगवा अरहं सम्मासम्बुद्धो विज्जाचरण संपन्नो सुगतो
लोगविदू अनुत्तरो पुरिसदम्मसारथी सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा ति"

ऐसे हैं बुद्ध, ऐसे हैं भगवान, तभी हैं बुद्ध, तभी हैं भगवान.

बुद्ध के इन गुणों को याद करके अपने भीतर प्रेरणा जगाएँ और वैसे ही गुण अपने में जगाने के सत्प्रयत्न में लग जाँय तभी सही माने में बुद्ध का सम्मान है, बुद्ध की वंदना है और तभी सही माने में हमारा अपना मंगल-कल्याण है.

कल्याण मित्र,
स. ना. गो.

साधकों के उद्‌गार

हैदराबाद का साधक सत्यनारायण त्रिवेदी, सहायक आचार्य को पत्रमें लिखता है, "मैंने आपकी प्रेरणा पाकर पहला शिविर १९७८ में इगतपुरी में किया था. उसके बाद अभी यहाँ पर चौथा शिविर पूरा किया. हर बार कुछ न कुछ अनुभूतियाँ हुईं और अनुभव बढ़े लेकिन घर पर ध्यानकी निरंतरता नहीं होने के कारण कोई विशेष प्रगति नहीं कर पाया. जीवन में बहुत से उतार-चढ़ाव आए. पिछले ३-४ महीनेसे मानसिक तनाव काफी बढ़ गया था इसलिए सोचा कि एक शिविरमें तुरंत बैठना नितांत अनिवार्य है.

पू. गुरुजी के इस शिविरमें बैठनेसे पूर्व बड़ी कठिनाइयाँ आईं परन्तु किसी प्रकार शिविर-स्थल तक पहुँच ही गया. शिविर के बीच भी बड़े अन्तर्द्वन्द रहे. पू. गुरुजी से मिला तो उन्होंने कहा, "धर्म के रास्ते आए हो, सब ठीक ही होगा. साधना करते रहो." और सचमुच शिविर-समापन होने तक सारे द्वन्द समाप्त हो चुके थे. अब मन बड़ा हलका और शांत है. सचमुच साधना धन्य है. इस मार्ग पर चलनेवाले सभी साधक धन्य हैं जिन्हें कि यह अनमोल विद्या प्राप्त हुई है. सबका मंगल हो!..."

● ● ●

जन साध्वी पू. विनोदिनीबाई स्वामीने लिखवाया, "पिछले चातुर्मासके दौरान हमारे चार स्वयं-शिविर बहुत ही अच्छी तरहसे सफल हुए. सब शिविर एक-एक साधक के मकानमें किये. एक के बाद एक शिविर उत्तरोत्त लाभदायी रहा. आश्चर्य की बात यह हुई कि पहले शिविर में साधनाके लिये एक कमरा मिला, दूसरे में दो कमरे मिले और तीसरे व चौथे शिविर के लिये पूरा फ्लेट मिला. बार बार आपकी याद आती कि धर्म के रास्ते चलें तो दृश्य, अदृश्य सभी शक्तियाँ अपने आप मदद करने लगती है. मनमें ऐसा ही होता रहा कि ऐसे ४–६ शिविर करने को मिलें तो बहुत सा मैल निकल जाय. चौथा शिविर बहुत अच्छा गया. मानो अपूर्व था.

अब तो हम तीनों को (साध्वियाँ एक साथ रहती हैं) ध्यान करना जितना अच्छा और कल्याणकर लगता है उतना दूसरा कुछ नहीं. अब ध्यान करना बहुत आसान हो गया है. पहले शिविरके दस दिन बहुत लंबे लगते थे परन्तु अब ऐसे लगता है कि १० दिन कैसे निकल गये? समय-सारिणी के अनुसार पूरा समय ध्यान करते रहते हैं तब भी ऐसा लगता है कि समय कम पड़ता है.

धर्म की बहुत ही रक्षा मिल रही है. कही से भी विरोध का वर्ताव सामने नहीं आ रहा. आपकी कृपा से हमारी साधना दिन-प्रतिदिन पुष्ट होती रहे. देश और दुनियामें धर्म का बल प्रबल हो! इस मंगल कामना के साथ..."

● ● ●

धर्म काम करता है

मुझे विपश्यना का अभ्यास करते हुए दस वर्ष से अधिक हो गये. लेकिन अनेक बार यूं लगता है कि मैंने धर्म को ठीक-ठीक समझ सकने की अभी शुरुवात ही की है. फिर भी मैं देखती हूँ कि जबसे मैं पहले शिविर में शामिल हुई तब से मुझमें कितने अच्छे परिवर्तन हुए है.

जैसे कि इस पीढ़ीके पश्चिमी युवा वर्ग में आम प्रचलन है. मेरे शील-सदाचार भी बहुत अच्छे नहीं थे; विशेषकर नशे पते और यौन सम्बधों में. लेकिन जबसे विपश्यना शुरु की है मैंने अपने में बहुत सुधार पाया है. मद्यपान तथा अन्य नशों की सारी कामनाएँ पूर्णतया दूर हो गयी हैं. धीरे धीरे यह भी समझ में आने लगा की एक के बाद एक नए शरीर सबंध होने कितने हानिकारक हैं. यह बात मेरी समझ में अच्छी तरह आ गयी कि कोई भिक्षु या भिक्षुणीका जीवन नहीं जी सकती तो शील सदाचार पालन करने के लिये एक आदर्श गृहस्थका जीवन ही उपयुक्त है. इसीलिए मैंने एक अन्य साधक से विवाह कर लिया और तबसे मेरी साधना में भी बहुत सुधार पा रही हूँ.

मैंने देखा है कि मेरी मैत्री भावना भी बहुत बढी है. पहले यदि कोई मुझसे दुर्व्यवहार करता तो मैं तुरन्त क्रोधकी ही प्रतिक्रिया करती और सबका दुःख बढ़ाती. पर अब सुधार हो रहा है. अब बहुधा प्रतिक्रिया प्यार और करुणा की ही होती है

इनमें से कोई सा भी सुधार महज बौद्धिक तर्कों और विश्लेषणों के कारण नहीं हुआ. लेकिन जैसे-जैसे साधना द्वारा मेरी प्रज्ञा बढ़ती गयी, यह सुधार स्वभावतः होते गये. परन्तु अभी तो शुरुवात ही है. जितना अधिक अभ्यास करती हूँ उतनी अधिक

यह धारणा पुष्ट होती है कि यह तो जीवन-पर्यंतका काम है. लेकिन जितने भी अच्छे परिवर्तन आ रहे हैं वे तो इतने स्पष्ट हैं और प्रभावशाली हैं.

धन्य हैं गोयन्काजी, हमारे प्रति आपका धीरज! धन्य है आपका मैत्रीपूर्ण धर्म-प्रशिक्षण और मार्ग-निर्देशन !

ऐसा धर्म सबको प्राप्त हो ! सारे प्राणी दुःख-विमुक्त हों !

(श्रीमती केट लैपिंग, अमेरिका)

• • •

शांत अवसान

पूना के श्री प्रवीण दोशी लिखते हैं, "मेरी पूज्य माताजी ताराबेन पिछले तीन वर्षों से नियमित रोज चार घंटे साधना करती थी. समताभाव स्थिर होने के कारण बड़े शांत चित्त से २५ मई को अपनी अंतिम सांस छोड़ी. उनको आपके मार्गदर्शन का लाभ मिला. विपश्यना धन्य है."

●

मेसर्स मोतीलाल बनारसीदास
बंगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली–११० ००७.
की मंगल कामनाओं सहित
↓

दूहा धरम रा

याद करूं जद बुद्ध ने, हिवड़ो हरखित होय ।
करुणा करुणागार की, तन मन विगळित होय ॥१॥
याद करूं जद बुद्ध ने, हिय उमड़े उच्छाव ।
जन जन रीं सेवा करूं, चढ़े चित्त मँह चाव ॥२॥
याद करूं जद बुद्ने, प्रग्या को भंडार ।
आपै जागै प्रेरणा, प्रग्या जगै अपार ॥३॥
सील समाधी ग्यान को, मंगल को आगार ।
इसै बुद्ध नै याद कर, जगै धरम को उवार ॥४॥
मव बंधन नै भग्न कर, बण्या बुद्ध भगवान ।
मेरा मी बंधन कटै, तो ही हुवै कल्याण ॥५॥
या ही साच्ची बन्दगी, यो हि बुद्ध सम्मान ।
प्रग्या जागै बींधती, प्रगटै पद निरवाण ॥६॥

दोहे धर्म के

करे बुद्ध को याद जब, मन प्रमुदित हो जाय ।
शुद्ध धर्म की प्रेरणा, अंतर में जग जाय ॥१॥
केवल बुद्धिकिलोल में, जीवन बीत न जाय ।
जगे आचरण धरम का, तो मंगल छा जाय ॥२॥
थोथे मिथ्या दम्भ से, बने न कोई संत ।
मन्त्र वासना कर बने, भाग्यवान भगवन्त ॥३॥
हनन करे अरिदल सकल, बने पूज्य अरिहन्त ।
जीते अपने आप को, जिन बन जाय जयन्त ॥४॥
कथनी करनी में जहाँ, किंचित भेद न होय ।
तथता के पथ जो चला, सही तथागत सोय ॥५॥
सद्गुण सारे बुद्ध के, बनें प्रेरणा स्रोत ।
अपने अंतर में जगे, शुद्ध धरम की ज्योत ॥६॥

विपश्यना विशोधन विन्यास के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक : रामप्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी–४२२ ४०३. दूरभाष : ८६
मुद्रण स्थान : अक्षरचित्र मुद्रणालय, सातपूर, नासिक–४२२ ००७. टेलिफोन : ३०२५१ ● वार्षिक शुल्क रु. १०/-आजीवन शुल्क रु. १००/–

विपश्यना" 6/86
पो. र. नं. Ns (M) 16/86

Licence No. NS 18
Licensed to post Without pre-payment

To

प्रेषक :
विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी–४२२४०३.
(नासिक, महाराष्ट्र, मध्य रेल्वे)